समयसार शास्त्र सिद्धान्त है, उसकी ३२० गाथा, सूक्ष्म भाव है। अनन्त काल से क्या चीज़ है, इसका उसको बोध कभी हुआ नहीं। इसमें यह गाथा तो बहुत मक्खन है अकेली। हिम्मतभाई! यह पढ़े न तो वहाँ हाथ आवे ऐसा नहीं है, कहीं कभी, कुछ अभ्यास नहीं होता। सूक्ष्म पड़ेगी। सुनो!

मुमुक्षु : सुनने के बाद समझना या नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री : समझने की तो दरकार करे तब, बात सुने तो सही अभी। क्या कहते हैं? बात यह चलती है कि पाँच भाव है, एक पारिणामिकभाव और एक उदय, उपशम, क्षयोपशम और क्षायिकभाव। एटले शूं? एटले क्या? अर्थात् क्या? क्या - शुं हमारी भाषा में, तुम्हारी भाषा में क्या?

जो आत्मा त्रिकाली द्रव्य है, त्रिकाली द्रव्य वस्तु सत् चिदानन्द, सत् शाश्वत्, चित् अर्थात् ज्ञान और आनन्द का कन्द ध्रुवस्वरूप है, उसको यहाँ पारिणामिक सहजभाव कहने में आता है। समझ में आया? जो वस्तु, त्रिकाल जो वस्तु आत्मा अविनाशीपना उसमें, त्रिकालपना आनन्द और ज्ञानादि गुणों का त्रिकालपना—ऐसी उस चीज़ को यहाँ पारिणामिकभाव-सहजभाव किसी की अपेक्षारहित अनादि-अनन्तभाव, उसे यहाँ पारिणामिकभाव कहने में आया है।

और उसकी पर्याय जो है, अवस्था जो है, हालत है, दशा-उस पर्याय के चार बोल कहने में आये हैं। समझ में आया? तब तो पर्याय उदय आ गया, जरा विचार आया। रात्रि को प्रश्न था न? विकार का उदय आत्मा की विकारी पर्याय है। यह प्रश्न पर के कारण वह होता है, यह प्रश्न यहाँ है नहीं। समझ में आया? पर्याय आयी या नहीं? चार भाव पर्यायरूप है। एक विकारभाव / उदयभाव, एक उपशमभाव, एक क्षयोपशमभाव (अर्थात्) किंचित् विकास और किंचित् विघ्न, उपशम में विकास और विघ्न बिलकुल नहीं और

क्षायिक में विघ्न बिलकुल नहीं और निर्मलदशा, ये सब चार अवस्थायें हैं। अवस्था है, पर्याय है, यह अपनी पर्याय अपने से है। समझ में आया? चाहे तो उदयभाव हो या चाहे तो क्षायिकभाव हो, चाहे तो धर्मभाव हो या चाहे तो अधर्मभाव हो परन्तु है अपनी पर्याय-निजद्रव्य की पर्याय। अरे! यह...

द्रव्य जो ध्रुव है, उसकी जो अवस्था-पर्याय-हालत है, वह अपनी है, अपने से है; पर की अपेक्षा कुछ है नहीं-यहाँ तो ऐसा सिद्ध किया है। समझ में आया? रात्रि को प्रश्न हुआ था न? ऐसा कि कर्म के वश है - ऐसा आया था न, भाई! स्वयं वश होता है, कर्म वश कराता नहीं। कर्म के-जड़ के आधीन होकर आत्मा अज्ञान में पूर्ण आधीन होकर विकार करता है और भान में जरा अस्थिरता (रूप) पर के आधीन हो जाता है। उस कारण उसमें विकार होता है तो विकार वह जीव की दुःखरूप विकारी अवस्था है और पश्चात् उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक वह निर्विकारी, निर्दोष, आनन्द की पर्याय है। पर्याय अर्थात् अवस्था।

इन चार भाव में से किस भाव से मुक्ति होती है, यह बात चलती है। समझ में आया? तो यहाँ कहा, देखो! दूसरा पैराग्राफ है न? कल चला न? **जो शक्तिरूप मोक्ष है, वह तो शुद्धपारिणामिक है,...** कल चला है, पृष्ठ तीसरा, उसका अन्तिम का दूसरा पैराग्राफ अथवा पहला-दूसरा से चौथा पैराग्राफ, दो लाईन का पैराग्राफ है, दो लाईन। इसे हाथ में नहीं आवे, बताओ। इसने कभी यह पुस्तक देखी नहीं होगी।

जो शक्तिरूप मोक्ष है,... क्या कहते हैं? कि मोक्ष होता है, वह किस भाव से होता है? किस पर्याय से होता है? यह बात चलती है। मोक्ष क्या? मोक्ष अपनी अवस्था में परम आनन्द की दशा, उसका नाम मोक्ष है। वह परम आनन्द की पूर्ण दशा जो पर्याय में होती है, उसे यहाँ क्षायिकभाव, पारिणामिक मोक्षभाव कहते हैं, पारिणामिक की पर्याय, हों! परन्तु वह यहाँ नहीं लेना, परन्तु यहाँ तो मोक्ष का कारण कौन है - ऐसा लेना है। समझ में आया? मोक्ष जो पूर्ण आनन्द की पर्याय है, परम शुद्ध, परम शुद्ध, उस अवस्था का कारण कौन?

तो कहते हैं कि शक्तिरूप मोक्ष है, वह तो कारण नहीं। जो त्रिकाल मोक्ष है, आत्मा का स्वभावभाव, सहजभाव, शुद्धभाव, अविनाशी ध्रुवस्वभाव, वह मोक्ष तो अनादि का है, वह तो शुद्धपारिणामिकभाव है, उसकी बात यहाँ नहीं चलती है। **प्रथम से ही विद्यमान है।**

वह त्रिकाल मोक्षस्वरूप को पहले से अनादि का अन्तर में स्वभावरूप भाव है, वह नया प्रगट होता है-ऐसी बात है नहीं। समझ में आया? **प्रथम से ही विद्यमान है।**

यह तो व्यक्तिरूप मोक्ष का विचार चल रहा है। यहाँ तो भगवान आत्मा ध्रुव, आनन्दस्वरूप, वह तो मुक्तस्वरूप ही अनादि से है, वह मोक्ष तो विद्यमान ही है, उसका यहाँ कोई प्रश्न है नहीं परन्तु उसकी पर्याय में, अवस्था में, हालत में शक्ति में से मोक्ष की- परम आनन्द की व्यक्तता प्रगट हो, उस दशा का कारण कौन है, यह बात चलती है। समझ में आया? तो कहते हैं **यह तो व्यक्तिरूप मोक्ष का विचार चल रहा है।** शक्तिरूप के मोक्ष की बात नहीं है। समझ में आया?

इसी प्रकार... जरा सूक्ष्म है, जरा सूक्ष्म है - ऐसा कहते हैं। बहुत सूक्ष्म है - ऐसी बात तो है नहीं।

मुमुक्षु : जरा अर्थात्।

पूज्य गुरुदेवश्री : थोड़ा, अल्प।

इसी प्रकार... अन्तिम पैराग्राफ। **सिद्धान्त में कहा है कि...** भगवान सर्वज्ञ परमात्मा त्रिलोकनाथ तीर्थंकरदेव, जिनको त्रिकाल ज्ञान हुआ, उस ज्ञान में जो तीन काल-तीन लोक भासित हुआ, उनकी दिव्यध्वनि निकली। दिव्यध्वनि-दिव्य अर्थात् प्रधान आवाज। उस आवाज को गणधरदेव ने सिद्धान्त में रचना की। उस सिद्धान्त में। **इसी प्रकार सिद्धान्त में कहा है कि - 'निष्क्रियः शुद्धपारिणामिकः'...** समझ में आया? इस श्लोक का अर्थ पंचास्तिकाय ५६ गाथा में है। संस्कृत टीका में, पंचास्तिकाय-जयसेनाचार्य की टीका में। यह **'निष्क्रियः शुद्धपारिणामिकः'...** समझ में आया? पहले पता नहीं था। कहते हैं कि शास्त्र में यहाँ-निष्क्रियः पारिणामिकः परन्तु कहाँ आया? समझ में आया? अभी तक दो-तीन बार पढ़ा परन्तु कहाँ आया, उसका पता नहीं था, फिर अभी-अभी पंचास्तिकाय देखते थे, चार भाव हैं न भाई उसमें? फिर कहा - लाओ इसमें होगा कुछ? है यहाँ पंचास्तिकाय? ५६-५६। पहले तीन बार पढ़ा तो कहाँ है - ऐसा ख्याल कभी नहीं। यह पहले-पहले यहाँ आता है, देखो! यह शब्द है यहाँ **'अत्र व्याख्यानेन मिश्र उपशमिक, क्षयोपशमिक, क्षायिक मोक्ष कारणम्'** भाई! यह चार भाव की ही व्याख्या है यहाँ। जयसेनाचार्य की टीका, यह भी जयसेनाचार्य की टीका है।

क्या कहते हैं ? **अत्र व्याख्यानेन** यहाँ व्याख्यान अर्थात् प्रसिद्ध कथन में मिश्र, उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, मोक्षकारणम् ...मोक्ष का कारण है। शोभालालजी! मोक्ष अर्थात् आत्मा की परमशुद्ध आनन्ददशा। यह संसारदशा है, वह विकारदशा-दु:खदशा। यह दु:खदशा उदयभाव की है और पूर्ण आनन्द की दशा, वह क्षायिकभाव की है। उस क्षायिकभाव का कारण कौन ? उस क्षायिकभाव का कारण कौन ? कि **मिश्र, उपशम, क्षायिक मोक्षकारणम् मोहोदयो सहित उदयो बंधकारणम्** परन्तु आत्मा में जो मिथ्यात्व और राग-द्वेष की पर्याय उत्पन्न होती है, वह उदयभाव है, वह बन्ध का कारण है। तीन भाव मोक्ष का कारण है, उदयभाव बन्ध का कारण है। समझ में आया ? इसमें बहुत व्याकरण-संस्कृत की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। इसकी रुचि की आवश्यकता है। नन्दकिशोरजी!

'**शुद्ध पारिणामिकः अस्तु बंध मोक्षयोः अकारणं इति भावार्थः**' संस्कृत है पंचास्तिकाय। **शुद्ध पारिणामिकः अस्तु** भगवान त्रिकाल शुद्धभाव, त्रिकाल ध्रुव, वह बन्ध मोक्ष का अकारण है। बन्ध और मोक्ष का कारण वह ध्रुव वस्तु नहीं। **तथा चउक्तम** फिर कहा है **मोक्ष कुर्वन्ति मिश्र उपशमिक क्षायिक अभिताः** अर्थात् अभिता अर्थात् बंध उदय का भाव। **निष्क्रिय परिणामिकः** भाई! यह श्लोक है। पहले श्लोक कहने के पश्चात् यह दूसरा श्लोक आया। ऐ..ई! **मोक्षं कुर्वन्ति मिश्रौपशमिकक्षायिकाभिधाः।** आत्मा की पूर्ण आनन्ददशा सच्चिदानन्द प्रभु, उस मोक्ष की दशा का कारण मिश्र अर्थात् क्षयोपशमभाव, उपशमभाव और क्षायिक अभिता: जिसका नाम यह तीन है-उपशम, क्षयोपशम और क्षायिक।

बंधमौदयिकाभावा जितनी पर्याय में अपने से मिथ्यात्व अव्रत, प्रमाद, कषाय, योग की पर्याय प्रगट होती है, वह बन्ध का कारण है। समझ में आया ?

मुमुक्षु : बन्ध का कारण है यह बात सत्य, परन्तु अपने से..

पूज्य गुरुदेवश्री : अपने से.. वह कहा न ? समयसार जयसेन आचार्य की टीका में है, १०७ गाथा, समयसार है, न भाई! उपादेय-उपादेय करके वहाँ है, देखो! ***अनादि बंधपर्याय वसेनः...*** संस्कृत है, भाई! इसमें पृष्ठ १७२, गाथा १०७, संस्कृत की पहली

लाईन टीका की, जयसेनाचार्य की। यह रात्रि को प्रश्न हुआ था न? ***अनादि बंधपर्याय वसेनः*** अनादि का कर्म जो पड़ा है, उसके वश होते हैं तो विकार होता है। कहीं कर्म विकार कराता नहीं। है भाई! १०६ के बाद तुरन्त ही। समझ में आया?

परन्तु यहाँ —यहाँ आया न अपने कि चार पर्याय है, अवस्था है और एक ध्रुवतत्त्व है तो उसका अर्थ यह हुआ कि पर्याय उसकी, उसमें, उसके कारण से होती है। पण्डितजी! समझ में आया? परन्तु लोगों को पता नहीं कि मार्ग क्या है, विकार क्या है, धर्म क्या? सिरपच्ची (में पड़े हैं)। यह व्रत करो, पूजा करो और भक्ति करो, हो गया धर्म... धूल भी धर्म नहीं, सुन तो सही। समझ में आया? भगवान आत्मा शुद्ध चिदानन्दस्वरूप जो ध्रुव है, वह तो निष्क्रिय है। यहाँ कहा न? सिद्धान्त में पारिणामिक को निष्क्रिय कहा है तो यह गाथा है। कहाँ की गाथा है, यह पता नहीं परन्तु यह गाथा है और यह विकार जो उत्पन्न होता है, अपनी अवस्था में (उत्पन्न होता है), जिसको यहाँ चार भाव पर्यायरूप कहा, अवस्थारूप कहा, दशारूप कहा और त्रिकाली भाव पारिणामिकरूप निष्क्रिय कहा, वह त्रिकाली भाव बन्ध-मोक्ष का कारण नहीं है। समझ में आया? यह तो अलौकिक बात है! अगम्य को गम्य करना ऐसी चीज़ है यहाँ तो।

कहते हैं आत्मा में यह विकार क्यों उत्पन्न होता है? '**अनादि बंधपर्याय वसेनः**' वश होने से। कर्मबन्धन है, वह आत्मा को विकार कराता है - ऐसा तीन काल में नहीं है। परद्रव्य विकार नहीं कराता परन्तु परद्रव्य के पर्याय में आधीन हो जाता है। समझ में आया? '**वसेन**' ऐसा पाठ है। '**वीतराग स्वसंवेदन लक्षण भेदज्ञान अभावभात्**' वापस यह न्याय दिया। समझ में आया? राग से भिन्न भगवान आत्मा शुद्ध आनन्दकन्द सच्चिदानन्द प्रभु निजस्वरूप सच्चिदानन्द स्वरूप शुद्ध है, ध्रुव आनन्द (है)। उसको राग से भिन्न करने का वीतरागभावरूपी भेदज्ञान के अभाव के कारण... समझ में आया? '**रागादि परिणाम हि उपादेयति**' यह उपादेय की व्याख्या की है। है न? १०७ गाथा। समझ में आया? भगवान आत्मा अपनी वर्तमान पर्याय-अवस्था में... पर्याय चार प्रकार की, अवस्था चार, उसमें जो एक उदयभाव की अवस्था है, वह अनादि कर्म जड़ है, उसके आधीन आत्मा होता है तो विकार होता है। समझ में आया? आधीन न हो तो विकार नहीं होता। पर, विकार नहीं कराता। समझ में आया? १०७ गाथा। प्रवचनसार, देखो, ४५ गाथा (औदयिकाभावाः)

(जयसेनाचार्यदेव की टीका) **अत्राह शिष्य :- 'औदयिका भावाः बन्धकारणम्' इत्यागमवचनं तर्हि वृथा भवति। परिहारमाह-औदयिका भावा बन्धकारणं भवन्ति, परं किंतु मोहोदयसहिताः।** अकेला उदय बन्ध का कारण नहीं है। गति आदि का उदय होता है न? २१ बोल आये न? तो अकेला गति आदि उदय, बन्ध का कारण नहीं है। उसमें मोह मिले, मिथ्याभ्रम मिले तो बन्ध का कारण है। समझ में आया? विशेष **द्रव्यमोहोदयेऽपि सति** अब जड़कर्म का उपस्थित उदय होने पर भी... उपस्थित की व्याख्या थी न! धन्नालालजी! यह उपस्थित आया, आहा..हा..! ४५ गाथा **द्रव्यमोहोदये** द्रव्य-जड़कर्म का उदय होने पर भी, उपस्थित होने पर भी **यदि शुद्धात्मभावनाबलेन भावमोहेन न परिणमति** अपनी शुद्ध भावना का आश्रय लेकर यदि विकाररूप न हो तो **तदा बंधो न भवति।** समझ में आया? वश और यह वश न हो और अपने शुद्धस्वभाव भगवान आत्मा निर्मलानन्द का आश्रय लेकर वीतरागभाव प्रगट करे तो उदय होने पर भी उसका बन्ध का कारण उत्पन्न नहीं होता। ४५ गाथा प्रवचनसार, ४ और ५। क्या कहते हैं तुम्हारे? ४५। समझ में आया? और समयसार की १०७ गाथा। जयसेनाचार्य की टीका, हों! दोनों जयसेनाचार्य की टीका है। आहा..हा..!

देखो, क्या कहते हैं? जड़कर्म का उदय जड़ में है - ऐसा होने पर भी भगवान आत्मा उसके आधीन हो जाये तो राग-द्वेष अज्ञान उत्पन्न करे और स्वभाव के आधीन हो जाये तो उदय होने पर भी राग नहीं होता, मिथ्यात्व नहीं होता, बन्धकारण नहीं होता। समझ में आया? **न परिणमति तदा बंधो ने भवति। यदि पुनः कर्मोदयमात्रेण बन्धो भवति** - कर्म की उपस्थिति मात्र से यदि बन्ध होता हो तो **तर्हि संसारिणां सर्वदैव मोदयस्य विद्यमानत्वात् सर्वदैव बन्ध एव, न मोक्ष इत्यभिप्रायः।** समझ में आया?

मुमुक्षु : हमेशा बन्ध रहेगा।

पूज्य गुरुदेवश्री : हमेशा बन्ध रहेगा। हमारे पण्डितजी (कहते हैं)। अच्छा। समझ में आया? यदि कर्म की उपस्थितिमात्र से बन्ध हो तो सर्व प्राणी को कर्म के उदय की उपस्थिति तो है तो कभी उसको मोक्ष होने का अवसर नहीं मिलेगा। धन्नालालजी!

मुमुक्षु : इसीलिए सोनगढ़वाले निमित्त को उड़ा देते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : निमित्त को उड़ाते क्या ? है ऐसा कहते हैं। आहाहा!

मुमुक्षु : निमित्त को सिद्ध करते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : निमित्त है, परन्तु यदि निमित्त के आधीन हो तो विकार होता है; निमित्त के आधीन न हो, भगवान आनन्दस्वरूप-भगवान सच्चिदानन्द का आश्रय लेकर वीतरागभाव से परिणमते हैं तो रागभाव से कर्म की उपस्थिति परिणमित नहीं करती नन्दकिशोरजी! इसलिए यहाँ कहने में आता है कि निमित्त आत्मा में कुछ नहीं करता। समझ में आया ? क्योंकि '**कर्मोदयमात्रेण बन्धो भवति**' कर्म के उदय की उपस्थितिमात्र से यदि बन्ध होता हो तो **संसारिणां सर्वदैव कर्मोदयस्य** - तो संसारी को तो कर्मोदय सदा है और **विद्यमानत्वात्** - कर्म के उदय की अस्ति तो है तो **सर्वदैव बन्ध एव,** सर्वदा बन्ध ही हो, **न मोक्ष इत्यभिप्रायः।** उसको मोक्ष नहीं होगा, सम्यग्दर्शन नहीं होगा क्योंकि कर्म विकार करावे, कर्म मिथ्यात्व करावे, कर्म अव्रत करावे, कर्म प्रमाद करावे, तो उसको छूटने का अवकाश नहीं मिलेगा। धन्नालालजी! बराबर है ? वहाँ सब बहुत गड़बड़ है। ऐसा पण्डित लोग कहते हैं और कितने ही (कि) ऐसा होता है वैसा होता है... धूल भी नहीं होता। सुन तो सही! यह तो कितना स्पष्ट है, देखो! (प्रवचनसार गाथा) ४५ में है और उसमें (है)।

यहाँ तो अपने क्या कहना है, देखो यहाँ - कि बन्ध-उदय का भाव **निष्क्रिय पारिणामिकः** अपने यह चलता है न ? ५६ वीं गाथा जयसेनाचार्य की टीका में ऐसा लिया है, यह यहाँ बताते हैं, देखो! **इसी प्रकार सिद्धान्त में कहा है कि...** अपने चलता है। '**निष्क्रियः शुद्धपारिणामिकः' अर्थात्, शुद्धपारिणामिक (भाव) निष्क्रिय है।** अर्थात् त्रिकाल ज्ञायक ध्रुव सच्चिदानन्द प्रभु तो परिणति / पर्याय बिना की चीज़ है। सेठ!

मुमुक्षु : बराबर, जिसका जोर ज्यादा हो जाये...

पूज्य गुरुदेवश्री : किसका ?

मुमुक्षु : कर्म से जीव का - पटनी का आया।

पूज्य गुरुदेवश्री : भाई कहते हैं ऐसे पटनी आया था, यहाँ भावनगर से, नहीं ? प्रभाशंकर पटनी दीवान। दीवान था। भावनगर में, नहीं ? दरबार का दीवान था।

मुमुक्षु : राजकीय व्यक्ति।

पूज्य गुरुदेवश्री : राजकीय, ठीक! मैं पॉलीटिकल कहना चाहता था। यह ठीक कहा। राजकीय व्यक्ति था, व्याख्यान सुनने आया था, सारी कोर्ट आयी थी, (संवत्) १९९३ अषाढ़ कृष्ण अमावस्या, सारी कोर्ट आयी थी, तो व्याख्यान चलता था, सुना, लौकिक में बहुत मस्तिष्कवाला था, राजकीय व्यक्ति था तो उसने सुना और सुनकर खड़ा हो गया, फिर कहा - महाराज! क्या कहें? यह तो अरस-परस की लड़ाई है, अरस-परस की लड़ाई है, कभी कर्म की डोर जोर करे तो विकार और कभी आत्मा का जोर रहे। यह सेठ ने ऐसा कहा।

मुमुक्षु : परन्तु शास्त्र में ऐसा आता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : आता है परन्तु वह तो निमित्त की बात है। आता है, इष्टोपदेश में- टीका में आता है। कभी जीव बलवान, कभी कर्म बलवान—यह पाठ आता है, देखो 'कम्मोबलियो' का अर्थ क्या? अपनी पर्याय में विकार करने का जोर है तो कम्मोबलियो कहने में आता है और स्वभावसन्मुख जोर होता है, अपने पुरुषार्थ से तो आत्माबलियो (बलवान) होकर विकार को उत्पन्न नहीं करता।

मुमुक्षु : वाह रे वाह! अपनी गलती से...

पूज्य गुरुदेवश्री : गलती अपनी और डालता है कर्म के ऊपर। अनादि से टेव ही ऐसी पड़ी है। समझ में आया? यह तो बड़े पण्डित का प्रश्न है, पहले से। हमारे तो ५५ वर्ष से चलता है, ५५ दो पाँच समझ में आया? (संवत्) १९७१ के वर्ष से चलता है कि कर्म से विकार होता है, कर्म से विकार होता है। बिल्कुल नहीं होता है। परद्रव्य से अपनी पर्याय में विपरीतता हो तो कभी विपरीतता छूटेगी नहीं। समझ में आया?

यहाँ क्या कहते हैं? अपने तो निष्क्रिय की बात ली थी। वह तो रात्रि के लिये प्रश्न था, इसलिए १०७ गाथा ली थी।

मुमुक्षु : स्पष्टीकरण हो गया।

पूज्य गुरुदेवश्री : वस्तु ही ऐसी है, भाई! परन्तु वह अपनी स्वतन्त्र वर्तमान दशा, उस दशा का कर्ता तो आत्मा है। समझ में आया? आत्मा अर्थात् वर्तमान भले पर्याय, परन्तु

आत्मा। परन्तु वह कर्ता कोई जड़द्रव्य है ? 'करे कर्म सो ही करतारा' विकार करे, वह विकार का कर्ता है। समझ में आया ? 'जो जाने सो जाननहारा' परन्तु राग का कर्ता न होकर मैं तो ज्ञान चिदानन्दमात्र हूँ - ऐसी दृष्टि करे तो राग का कर्ता न होकर राग का ज्ञाता होता है। ऐ सेठ ! जोर नहीं है। आहा..हा.. !

भगवान आत्मा '**निष्क्रियः शुद्धपारिणामिकः**' अर्थात् भगवान ध्रुव अविनाशी जो सत् है, अविनाशी जो ध्रुव सत् है, नित्य सत् है, एक समय की पर्याय / परिणतिरहित चीज़ है। एक समय की अवस्था है, उस सिवाय की चीज़, ऐसा जो ध्रुव भगवान आत्मा, परम स्वभावभाव, वह तो निष्क्रिय है। उसमें कोई परिणति विकार की नहीं और मोक्षमार्ग की परिणति / पर्याय उस द्रव्य में नहीं। आहाहा ! समझ में आया ? **निष्क्रिय का क्या अर्थ है ? (शुद्धपारिणामिकभाव)...** भगवान त्रिकाल ध्रुव सच्चिदानन्दप्रभु नित्यानन्द अविनाशी अंश वह **बन्ध के कारणभूत जो क्रिया...** देखो ! बन्ध के कारणभूत क्रिया **रागादिपरिणति, उसरूप नहीं है...** पर्याय में-अवस्था में विकार है; ध्रुव, विकार का कारण नहीं और ध्रुव में विकार है नहीं। आहा..हा.. !

मुमुक्षु : त्रिकाल में विकार नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं है, विकार पर्याय में है; इसीलिए तो चार बोल पर्यायरूप कहे, चार भाव पर्यायरूप / अवस्थारूप और एकभाव द्रव्यरूप कहा। समझ में आया ? सादी बात है परन्तु लोगों को अभ्यास नहीं न, इसलिए बाहर की सिरपच्ची में घुस गये हैं धर्म के नाम से भी। यह सत्य क्या है उसका पता नहीं।

कहते हैं **निष्क्रिय का क्या अर्थ है ? (शुद्धपारिणामिकभाव)...** त्रिकाल भाव, त्रिकाल दल, लो ! दल याद आया। एक प्रश्न आया था दर्पण का, दल लिया है न भाई ! दल क्या ? ऐसा शब्द है। पुरुषार्थसिद्धियुपाय है न ? पहली कड़ी, वन्दन किया है न वन्दन ! दर्पण के दल में जैसे सब दिखता है, वैसे भगवान की पर्याय में सब दिखता है - ऐसा वहाँ पाठ है, हों ! परन्तु दल का अर्थ वहाँ दर्पण की पर्याय लेना - ऐसा है। समझे या नहीं ?

है पुरुषार्थसिद्धियुपाय ? दल का फिर यह वापस मस्तिष्क में उठा था। दल -तल। दर्पणतल, तल, सपाटी ऊपर की - देखो !

तज्जयति परं ज्योतिः समं समस्तैरनन्तपर्यायैः।
दर्पणतल इव सकला प्रतिफलति पदार्थमालिका यत्र ॥१॥

देखो, क्या कहते हैं, देखो! दर्पण तल। दर्पण जो है न, दर्पण। क्या कहते हैं? अरीशा। उसकी ऊपर की सपाटी की पर्याय में यह त्रिकाल जानने में आता है, त्रिकाली दल में नहीं। तल में जानने में आता है, वह दल में नहीं।

मुमुक्षु : तल और दल दो शब्द....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो फिर उसके साथ। फिर से – जैसे दर्पण है दर्पण, वह तो सारा दल भी है और एक समय की अवस्था दशा में ऊपर के तल अर्थात् नीचे का न लेकर यहाँ से-ऊपर से लेना, नहीं तो तल अर्थात् तलिया लेना है – परन्तु वह न लेकर बाहर की जो अवस्था उसका नाम तल-दर्पण में एक समय की अवस्था में जो-जो चीज़ देखने में आती है न? वह तो दर्पण की अवस्था है। वह चीज़ नहीं। एक समय की दर्पण का दल जो त्रिकाल है, उसकी ऊपर की अवस्था को यहाँ तल कहते हैं। उस तल में सब जानने-देखने में आता है; इसी प्रकार भगवान आत्मा... यहाँ देखो! ज्ञान की-केवलज्ञान की पर्याय भी क्षायिकभाव से भी पर्याय है तो उस पर्याय में लोकालोक जानने में आता है। दर्पण का दल जो त्रिकाल है, वैसे यहाँ पारिणामिकभाव जो त्रिकाल दल है, उसमें ज्ञान की पर्याय नहीं, केवलज्ञान की पर्याय नहीं। आहा! समझ में आया?

यह तो अमृतचन्द्राचार्य का श्लोक – **दर्पणतल इव सकला** समस्त लोकालोक, तीन काल के द्रव्य / वस्तु, उसकी शक्ति और उसकी अवस्था। जैसे दर्पण के तल में देखने में आता है; (उसी प्रकार) भगवान की ज्ञानपर्याय में जानने में आता है। उस ज्ञान का दल जो त्रिकाल ध्रुव है, उसमें नहीं। ऐ... हीराभाई! आहाहा!

भगवान ध्रुव वस्तु है, वह तो तल की एक समय की केवलज्ञान की पर्याय से भी भिन्न है। जैसे उस दर्पण का दल भिन्न है, एक समय की पर्याय... यहाँ दृष्टान्त, भाई! बहुत दिया है भाई ने, अपने सोगानी, सोगानी ने दृष्टान्त बहुत बार दिया है। निहालचन्द्र सोगानी। समझ में आया? कलकत्तावाला। जो आत्मज्ञान पाकर स्वर्ग में चले गये और अल्पकाल में केवलज्ञान लेंगे – ऐसी उसकी ताकत है। समझ में आया? उसने बहुत बार दर्पण तल-

दर्पण दल, दर्पण दल ऐसी बात ली है कि दर्पण का दल तो त्रिकाल भिन्न है, ऊपर की अवस्था में सब स्वच्छता के कारण वह सब प्रतिबिम्ब-बिम्ब का प्रतिबिम्ब, उसकी पर्याय में देखने में आता है। दर्पण का दल तो अत्यन्त भिन्न है। समझ में आया?

इसी प्रकार भगवान आत्मा का ज्ञान दल जो त्रिकाल है, ज्ञान दल-गुण, ध्रुव, उसमें जानने की क्रिया की परिणति नहीं, वह तो निष्क्रिय है। आहा..हा..! समझ में आया?

तो दर्पण तल का कहा न? यहाँ तल का अर्थ ऐसा न लेकर, ऐसा तल लेना।

मुमुक्षु : तल अर्थात् क्या?

पूज्य गुरुदेवश्री : ऊपर की सपाटी, ऊपर की सपाटी, दर्पण की ऊपर की सपाटी। इसी प्रकार भगवान आत्मा आनन्दकन्द ज्ञान का ध्रुव वस्तु है, उसकी ऊपर की पर्याय उसकी सपाटी है, वस्तु तो वस्तु ध्रुव है, उसमें तीन काल का जानना-फानना की पर्याय उसमें है नहीं। अरे! यह! समझ में आता है न? समझ में आये ऐसी बात है, हों! (न समझ में आये) ऐसा कुछ नहीं। भगवान तीन लोक का नाथ स्वयं है, उसे कहाँ इसका पता है। समझ में आया? परमात्मास्वरूप स्वयं अपने में पूरा पड़ा है। कहीं खोजते-खोजते कहीं पर्वत में पड़ा होगा, कहीं शत्रुंजय में होगा, कहीं सम्मेदशिखर में होगा। ऐई आता है न? भाई! समयसार नाटक में (आता है) 'मेरो धनी है मेरे पास' ऐसा कुछ आता है। बन्धद्वार है उसमें होगा। (४८ पर)

कहीं होगा? 'मेरो धनी है' ऐसा कहीं लिखा है। यह यहाँ आया देखो! रागादि शुद्धता-अशुद्धता अलख की। विकारी पर्याय भी भगवान की पर्याय है और त्रिकाली शुद्धपर्याय भी अलख, पर्याय है, हों! निर्मल पर्याय, वह भी आत्मा की है, वह कहीं पर्याय पर की है - ऐसा है नहीं। समयसार नाटक में, बन्धद्वार। **केई उदास रहे प्रभु कारन, केई उदास रहे प्रभु कारन, केई कहे उठी जाय कहीके**-चले जाएं ऐसे, मिलेगा कहीं, **केई प्रनाम करे गढ़ि मूरति**-मूर्ति-गढ़ को प्रणाम करता है। भगवान! कुछ देना। **''केई पहाड़ चढै चढि छींकै।''**

छींकै क्या कहलाता है? यह डोली, डोली में चढ़ते हैं न लोग ऊपर! **'केई पहाड़ चढ़े चढि छींकै' केई कहे असमान के उपरि, केई कहे प्रभु हेठ जमी के',** कोई कहे नीचे

और कोई कहे ऊपर। अरे सुन तो सही भगवान! '**मेरो धनी नहीं दूर देशान्तर**' मेरा भगवान नहीं दूर देशान्तर-काल से दूर नहीं और क्षेत्र से दूर नहीं। '**मोही में है मोही सूझत नीके**' - मुझमें है, मैं परमात्मा अखण्डानन्द सच्चिदानन्द शुद्धस्वरूप हूँ '**मोही में है मोही सूझत नीके**' बराबर मुझे सूझता है। बनारसीदास (कहते हैं)। कलश टीका में है नहीं, ऊपर से लिया है। '**मेरो धनी नहीं दूर देशान्तर, मोही में है मुझे सूझत नीके।**' समझ में आया? अन्य क्षेत्र में कोई नहीं, हममें हैं और हमें भले प्रकार अनुभव में आता है। बन्ध द्वार-४८। समझ में आया?

क्या कहते हैं? जैसे दर्पण का दल त्रिकाल कायम दल-पिण्ड में स्वच्छता की ऊपर की जो पर्याय है, उसमें-पर्याय में सब झांईं-प्रतिबिम्ब पड़ते हैं। दल तो ऐसा का ऐसा है। इसी प्रकार भगवान आत्मा का जो त्रिकाली दल है, एक समय की केवलज्ञान की पर्याय सिवाय का, सिवाय कहते हैं न? अलावा। सब तुम्हारी हिन्दी आती है हमें। यहाँ अलावा शब्द चलता है। एक समय की केवलज्ञान की पर्याय जिसमें तीन काल-तीन लोक जानने में आता है, उस पर्याय से दल तो अत्यन्त भिन्न है। मूलचन्दभाई!

इस **निष्क्रिय का क्या अर्थ है? बन्ध के कारणभूत जो क्रिया-रागादिपरिणति, उसरूप नहीं है...** देखो! उदयभाव की परिणतिरूप राग अपनी पर्याय में होता है, वह द्रव्य में नहीं-ध्रुव में नहीं, अन्तरस्वभाव त्रिकाल आनन्दमूर्ति भगवान में राग नहीं। राग की - बन्ध की पर्याय, बन्ध के कारण की अवस्था, वह त्रिकाल पारिणामिक सहजभाव में है नहीं। कहो, समझ में आता है या नहीं? यह तो सादी भाषा है। इसमें कोई ऐसी कोई नहीं है। **उसरूप नहीं है।** जैसे दर्पण में कोयला, केरी-आम अन्दर दिखता है न, तो आम अन्दर है नहीं; अन्दर में तो दर्पण की ऊपर की तल की सपाटी की पर्याय है वह तो। वह तो कोई आम नहीं, कोयला नहीं, वैसे भगवान आत्मा अखण्डानन्द ध्रुव प्रभु अविनाशी तत्त्व जो है, ऊपर की एक समय की पर्याय में तीन काल-तीन लोक देखते हैं, वह एक समय की पर्याय और राग वह द्रव्य में नहीं। आहाहा! समझ में आया?

वह अशुद्धता जिसे दोष कहते हैं, वह द्रव्य में नहीं। वह अशुद्ध की परिणति, वस्तु में नहीं है। क्योंकि वह तो अशुद्ध परिणति है, पर्याय है, सक्रिय अवस्था का भाव है। वह

सक्रिय राग की अवस्था का भाव, त्रिकाल द्रव्य में है नहीं। शोभालालजी! यह तो जँचे ऐसा है, हों! समझ में आये ऐसा है। न समझ में आये ऐसा नहीं। न समझ में आये - ऐसा यहाँ हमारे पास नहीं कहना। वह था न भाई! क्या कहलाता है?

मुमुक्षु : नेपोलियन, अशक्य मेरे पास नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : नेपोलियन। अशक्य हमारे पास कहना नहीं। वह तो व्यर्थ का। पर का कर सके नहीं न! अशक्य है, वह मेरे पास लाना नहीं... उसके शब्दकोष में नहीं। इसी प्रकार यहाँ न समझ में आये - ऐसा आत्मा में है नहीं। शब्दकोष में, सिद्धान्त में भी ऐसा है नहीं।

भगवान सच्चिदानन्द प्रभु अखण्ड आनन्दधाम की पर्याय में न समझने में आवे - ऐसी चीज़ वह है नहीं। कलंक लगता है। न समझ में आये - ऐसा कहना यह कलंक लगता है। कहते हैं। शुद्धपारिणामिकभाव जो त्रिकाल दल, वह तो बन्ध के कारणभूत क्रिया, क्रिया... देखो, क्रिया कहा न? वह (पारिणामिकभाव) निष्क्रिय है न? त्रिकाल शुद्धभाव ध्रुव निष्क्रिय है तो रागादि की क्रिया कहने में आयी, जड़ की क्रिया नहीं, पर की क्रिया नहीं। आहा..हा..!

बन्ध के कारणभूत जो क्रिया... अर्थात् परिणति अर्थात् पर्याय, **रागादिपरिणति...** राग, मिथ्यात्व, अज्ञान, राग-द्वेष, क्रोध-मान की अवस्था **उसरूप...** वह त्रिकाली दल भगवान ध्रुव वह नहीं है। बराबर है? इसके लिये तो सामने पन्ने रखे हैं। **और मोक्ष के कारणभूत जो क्रिया...** मोक्ष के कारणरूप क्रिया **शुद्धभावना...** भी पर्याय **शुद्धभावना-परिणति,...** वह रागादि परिणति थी, यह शुद्धभावनापरिणति है। आत्मा में शुद्ध ध्रुव का लक्ष्य करके वीतरागी दर्शन, वीतरागी ज्ञान और वीतरागी परिणति उत्पन्न होती है, वह परिणति क्रिया है। वह त्रिकाली निष्क्रिय में है नहीं। समझ में आया?

मुमुक्षु : यही बात समझाने को आपने शिविर लगाया था?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह कुछ पता नहीं, हमें विकल्प तो इतना था कि यह गाथा अमृतचन्द्राचार्य की चल गयी, तो फिर कहा यह गाथा रह जाती है, रह जाती है तो शिविर के समय लेंगे, कहा - ऐसा विकल्प आया था तो रामजीभाई ने छपा दिये

१५०० पन्ने, सबके हाथ में रखे तो कैसा अर्थ होता है। अद्धर से अर्थ होगा? कहाँ से होगा? समझ में आया?

भगवान आत्मा अविनाशी जो अंश है त्रिकाल और पर्याय है, वह तो नाशवान है। चाहे तो केवलज्ञान की पर्याय ही नाशवान है। ऐ... नन्दकिशोरजी!

मुमुक्षु : क्या कहते हैं आप?

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या कहते हैं यह? केवलज्ञान है, यह गुण के उत्पाद की नयी पर्याय है, एक समय का जो केवलज्ञान हुआ, वह दूसरे समय नहीं रहेगा, दूसरे समय व्यय होगा, नाश होगा, केवलज्ञानपर्याय नाशवान है; भगवान त्रिकाली पारिणामिकभाव अविनाशी है। समझ में आया? तो अविनाशी भगवान पर दृष्टि देने से सम्यग्दर्शन और धर्म होता है। समझ में आया?

कहते हैं मोक्ष के कारणभूत दशा... मोक्ष तो पूर्ण दशा है। उसका उपाय-उपाय, कारणभूत लिया न? वास्तव में पर्याय में है - ऐसा कहते हैं। **जो क्रियाशुद्ध-भावनापरिणति,...** देखो! शुद्धभावना अर्थात् शुद्ध त्रिकाली ज्ञायकभाव में एकाग्रतारूप परिणति, शुद्ध त्रिकाली भाव में एकाग्ररूपी अवस्था, जिसे मोक्षमार्ग कहते हैं, जिसको सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र कहते हैं। ध्रुव **उसरूप भी नहीं है;...** मूलचन्दभाई! आहाहा! ईश्वर की लीला है ऐसी अपनी। अपनी लीला, हों! दूसरे की नहीं। यह भगवान आत्मा सच्चिदानन्द प्रभु ध्रुव अविनाशी भगवान अन्दर वस्तु का भाव, उसमें तो कहते हैं, यह भाव पारिणामिकभाव से पहिचानने में आता है, इस भाव में बन्ध का कारण जो मिथ्यात्व-राग-द्वेषपरिणाम जो बन्ध के पाँच कारण कहते हैं न? मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और योग-वह क्रिया, ध्रुव में नहीं है। पारिणामिकभाव जो निष्क्रिय है, उसमें वह क्रिया नहीं। ऐ... हिम्मतभाई! यह थोड़ा सूक्ष्म पड़ेगा। कभी सुना ही नहीं होगा इसने। जयन्तीभाई को तो अभी नया लगे न? कहो, समझ में आया?

मोक्ष के कारणभूत जो क्रिया... देखो, क्रिया तो आयी; कोई कहते हैं कि क्रिया को उड़ाते हैं, परन्तु कौन सी क्रिया? सुन तो सही।

मुमुक्षु : एक क्रिया बाहर की और एक शुभ की क्रिया।

पूज्य गुरुदेवश्री : शुभ की क्रिया। समझ में आया ? शरीर, वाणी की क्रिया पर्याय- वह तो जड़ में रही और राग की क्रिया / पर्याय तो विभाविक क्रिया वह तो बन्ध के कारण में रही। समझ में आया ? व्यवहाररत्नत्रय का विकल्प है, वह तो बन्ध के कारण में गयी, उदयभाव में गयी। समझ में आया ? बन्ध का कारणरूप जो रागादि, वह दया, दान, व्रत, आदि, देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा का विकल्प, वह मिथ्यात्व नहीं, वह तो राग है। वह राग की परिणति, बन्ध के कारण में गयी; वह मोक्ष के कारण में नहीं, वह क्रिया मोक्ष के कारण की नहीं। आहाहा! कहो, **मोक्ष के कारणभूत जो क्रिया,..** वह क्रिया है या नहीं अन्दर ? मोक्ष के कारण की क्रिया आत्मा में है परन्तु कौन सी क्रिया **शुद्धभावनापरिणति,..** आहाहा! भगवान आत्मा पूर्ण ध्रुव सच्चिदानन्द नित्यानन्द में दृष्टि लगाने से, उसे ध्येय बनाने से एक समय का निमित्त, राग और पर्याय का ध्येय छोड़ करके... इस ग्रहणपूर्वक वह त्याग होता है। आहा..हा..! क्या कहा ? भगवान ध्रुवस्वरूप को ध्येय बनाकर जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की क्रिया, वीतरागी पर्याय उत्पन्न हुई तो मिथ्यात्व और राग का त्याग हो गया, वह त्याग हो गया। आहाहा! समझ में आया ?

मोक्ष के कारणभूत... मोक्ष जो पूर्ण सिद्धपद—ऐसी निर्मल अवस्था सिद्ध की, वह भी पर्याय है, वह पर्याय भी ध्रुव में तो नहीं परन्तु उस पर्याय का कारण, शुद्धभावनापरिणति (अर्थात्) वीतराग निर्दोष श्रद्धा, ज्ञान और शान्ति - ऐसी जो सक्रिय अर्थात् पर्याय की परिणति, ध्रुव में नहीं, वह पारिणामिकभाव में है नहीं। अरे, गजब बात भाई! कितनों ने ही तो ऐसा सुना नहीं होगा। मूलचन्दभाई को ठीक, कितनों ने ही तो सुना भी नहीं होगा। हिन्दुस्तान में ऐसे से ऐसे शिखर जाये-सम्मेदशिखर जाये और ऐसे जाये, पालीताना जाये..

मुमुक्षु : दृष्टि में अकर्ता, व्यवहार से कर्ता...

पूज्य गुरुदेवश्री : व्यवहार से कर्ता धूल में भी नहीं है। सुन तो सही। पर के कर्ता की तो बात भी नहीं है। समझ में आया ?

मुमुक्षु : सुना भी नहीं होगा - इसका क्या मतलब ?

पूज्य गुरुदेवश्री : सुना ही नहीं क्या चीज़ है। यों सुना ही नहीं; कान में बात नहीं पड़ी। समझ में आया ? ऐ... अमुलखचन्दजी! देखो, बात अलौकिक बात है। आहाहा!

भगवान! तेरी चीज़ तो देखा, पहले श्रद्धा-ज्ञान में तो ले। आहाहा! समझ में आया? अद्‌भुत गाथा, अलौकिक बात है, हों! यह तो इस बार शिविर में अच्छी बात यह निकल गयी है, हों! लो, यह तो दसवाँ व्याख्यान है न, यह दसवाँ व्याख्यान है, इस पन्ने में से दसवाँ व्याख्यान है। ऐ..ई..!

मुमुक्षु : भाविभागन वश बात आ गयी!

पूज्य गुरुदेवश्री : सत्य बात है, हों! भाई! बात तो ऐसी है।

मुमुक्षु : अनुभव की तैयारी, ऐसी वाणी निकलती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : भगवान त्रिलोकनाथ परमात्मा परमेश्वर के मुख से जो दिव्यध्वनि आयी, यह आयी है।

कहते हैं भगवान आत्मा दो अंश—एक त्रिकाली ध्रुव अंश और एक समय की पर्याय, अवस्था का अंश, तो पर्याय का जो अंश है, उसमें ये दो प्रकार हैं। एक विकार की पर्याय का अंश, बन्ध का कारणरूप, वह भी ध्रुव में नहीं और एक मोक्ष का कारणरूप शुद्ध निर्मल सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र, मोक्ष का मार्ग जो निर्मल वीतरागी पर्याय है, वह भी ध्रुव में नहीं है। क्योंकि वह क्रिया है और वस्तु अक्रिय है। आहाहा! कभी सुना भी नहीं होगा। ऐ... हिम्मतभाई! सब समय ऐसा का ऐसा बिताया। वाँचन करना और यह करना और हो हा... यहाँ बना दिया कॉलेज, क्या कहा? बोटाद में कोई जयन्तीभाई, क्या कहा? बोटाद में कहीं था या नहीं?

मुमुक्षु : स्मारक बनाया, कॉलेज।

पूज्य गुरुदेवश्री : कॉलेज बनाया, क्या कहें भाषा नहीं आती। बैठे रहे ऐसे जरा हाथ रखकर, धूल भी नहीं किया कुछ अब सुन न? कौन करे? क्या किया यह? कॉलेज-फॉलेज कौन करे? कॉलेज तो जड़ की अवस्था, उस काल में पर्याय के परिणमन का काल हो तो स्वकाल हो तो होता है, वहाँ दूसरा कोई कॉलेज तो कर सकता है?

मुमुक्षु : कोई करता तो होगा न?

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, करता है न? ये परमाणु, परमाणु पलटते.. पलटते.. पलटते..

जैसे नदी का प्रवाह चलता है और प्रवाह जैसे नदी में आता है, वैसे पलटते-पलटते पर्याय होती है, उसमें दूसरा कौन करे ? यह तत्त्व है या नहीं, यह जड़ ? समझ में आया ?

यहाँ तो राग करते हैं, वह भी मिथ्यात्वभाव में है, राग मेरा और राग का कर्तव्य मेरा, चला जा संसार में भटकने को, क्योंकि कर्ता हो, वह भोक्ता होता ही है। आहाहा! यहाँ तो मात्र इतना बतलाना है कि भगवान त्रिकाली प्रभु अविनाशी शक्ति का सत्व / भाव, वह निष्क्रिय है। उसमें हालत / पर्याय / दशा ऊपर होती है। समझ में आया ? उस दशा में दो प्रकार अथवा चार भाव हैं - एक उदयभाव, उपशमभाव, क्षयोपशमभाव, क्षायिकभाव है तो उसमें बन्ध की कारणभूत जो क्रिया उदयभाव.. देखो, उदय को तत्त्व कहा न ? मोक्षशास्त्र में दूसरे अध्याय में पहला बोल (में कहा है) मिश्र, उदय आदि स्वतत्त्व-जीव का स्वतत्त्व-पाँचों को स्वतत्त्व कहते हैं। जीव का स्वतत्त्व, वह उसका सत्व है। पर्याय का अंश तत्त्व उसका है। समझ में आया ?

यह तो यहाँ बताया कि चार भाव पर्यायरूप है। आहाहा! कहते हैं, मोक्ष के कारणभूत जो क्रिया, पलटना-पलटना सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप निर्विकल्प शान्ति और आनन्दरूप दशा, वह शुद्धभावनापरिणति, वह वीतरागी अवस्था, निर्दोष दशा, जो ध्रुव को ध्येय करके बनी, परन्तु उस ध्रुव का ध्येय करके जो शान्ति बनी, वह शान्ति की क्रिया निष्क्रिय ध्रुव में नहीं है। आहाहा! समझ में आया ?

एक ऐसी चीज़ है। वीतरागमार्ग में ऐसा ख्याल तो आयेगा या नहीं इसको ? समझ में आया ? आहाहा! **शुद्धभावनापरिणति**-परिणति। परिणति समझे पर्याय ? शुद्धभावना अर्थात् देखो! ये भावना वे कहते हैं न-भावना अर्थात चिन्तवना, विकल्प, वह नहीं। यहाँ तो शुद्ध ध्रुव में एकाग्र होकर वीतरागी निर्दोष आनन्द की पर्याय प्रगट हुई, उस सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र को शुद्ध भावना कहते हैं। संकल्प-विकल्प चिन्तवन करना, वह भावना नहीं, वह उदयभाव में गये। वह तो बन्ध का कारण है। समझ में आया ?

शुद्धभावनापरिणति, उसरूप भी नहीं है;... उसरूप भी निष्क्रिय जो ध्रुवचीज़ अविनाशी है.. है.. है.. है.. अनादि है भगवान। समझ में आया ? क्योंकि यह तो है। अनादि का है। समझ में आया ? यह वस्तु तो अनादि की है। जो अनादि की है, वह दृष्टि में आयी

तो कहते हैं कि उस दृष्टि की क्रिया ध्रुव में नहीं। समझ में आया? दृष्टि / धर्म तो नयी पर्याय उत्पन्न हुई; धर्म कोई गुण नहीं; धर्म कोई द्रव्य नहीं; धर्म तो पर्याय है, अवस्था है। समझ में आया? वह अवस्था, त्रिकाल रहनेवाली चीज़ को ध्येय बनाकर जो पर्याय उत्पन्न हुई, वह मोक्ष के कारणरूप पर्याय निष्क्रिय ध्रुव में नहीं है। जिसके ध्येय बनाया, उसमें वह क्रिया नहीं है। आहाहा! ऐ... भीखाभाई! गजब बात, भाई! आहाहा! हैं?

मुमुक्षु : आप जो कहो वह बराबर।

पूज्य गुरुदेवश्री : वस्तु ऐसी है, कौन कहे?

इसलिए ऐसा जाना जाता है कि.. इस कारण ऐसा जानने में आता है कि **शुद्धपारिणामिकभाव ध्येयरूप है,..** देखो! निष्क्रिय है, इसलिये ध्येयरूप है। निष्क्रिय है, इस कारण ध्येयरूप है। सक्रिय परिणाम, ध्येयरूप नहीं। सक्रिय परिणाम, द्रव्य को ध्येय बनाते हैं। आहाहा! शुद्धपारिणामिकभाव ध्येयरूप है। अन्तर ज्ञायक त्रिकाली भगवान सत् अविनाशी, वह दृष्टि में ध्येयरूप है। **ध्यानरूप नहीं है।** यह ध्यान किसे कहा? शुद्धभावनापरिणति, शुद्धभावनापरिणति, वह ध्यान है। वह उपशम, क्षयोपशम, क्षायिकभाव से तीन गिनने में आया, वह। समझ में आया? यह पन्ना तो जरा पढ़े और विचारे तो कुछ ख्याल आवे, पन्ना घर ले जाना, इसमें कोई दिक्कत है नहीं। समझ में आया? पढ़े तो सही कि ऐसा अर्थ किया उसमें से, छोड़कर जाये तो पता नहीं पड़े कुछ। ऐसा पन्ना तो रक्षा करना, हों! पन्ने की बराबर।

मुमुक्षु : पन्ने के अलावा कुछ तो दो महाराज!

पूज्य गुरुदेवश्री : यह देते हैं न? क्या कहते हैं? कौन दे और कौन ले? आहाहा! यह पर्याय कहीं बाहर से आती है? यह पर्याय, पर्याय में से, द्रव्य में से आती है। परन्तु द्रव्य ध्रुव है, वह तो त्रिकाली में ध्रुव सदृश है, भेदरूप कहने से वह पर्याय ध्रुव में से-द्रव्य में से आती है। आहाहा!

सामान्यरूप जो ध्रुव है, वह तो पर्यायरहित अभेद चीज़ है। समझ में आया? इसलिए ध्यानरूप नहीं। मोक्षमार्ग ध्यान है, मोक्षमार्ग ध्यान है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की पर्याय ध्यानरूप है। शुद्धभावनापरिणति / पर्याय, ध्यानरूप है; ध्रुव, ध्यानरूप नहीं है।

समझ में आया? **ध्यानरूप नहीं है। किसलिए? क्योंकि ध्यान विनश्वर है...** आहाहा! लो! क्षायिकसमकित भी एक समय की पर्याय है। गजब बात! समझ में आया?

(और शुद्धपारिणामिकभाव तो अविनाशी है)। भगवान त्रिकाली अखण्डानन्द प्रभु है.. है.. है.. है.. अनादि-अनन्त है, वह तो अविनाशी चीज़ है। परिणति / अवस्था है, वह तो बदलती-नाशवान है; इसलिए नाशवान चीज़, ध्रुव में है नहीं। ध्रुव का ध्येय हो, परन्तु उसमें ध्यान की पर्याय क्यों नहीं है, इसका कारण विशेष आयेगा।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)

सम्यग्दर्शन प्रगट करना तो सुगम है

जिस प्रकार किसी जीवित राजकुमार को — जिसका शरीर अति कोमल हो- जमेशदपुर-टाटानगर को अग्नि की भट्टी में झौंक दिया जाये तो उसे जो दु:ख होगा, उससे अनन्तगुना दु:ख पहले नरक में है और पहले की अपेक्षा दूसरे, तीसरे आदि सात नरकों में एक-एक से अनन्तगुना दु:ख है —ऐसे अनन्त दु:खों की प्रतिकूलता की वेदना में पड़े हुए, घोर पाप करके वहाँ गए हुए, तीव्र वेदना के गंज में पड़े होने पर भी किसी समय कोई जीव ऐसा विचार कर सकते हैं कि अरे रे! ऐसी वेदना! ऐसी पीड़ा! ऐसे विचार को बदलकर स्वसन्मुख वेग होने पर सम्यग्दर्शन हो जाता है। वहाँ सत्समागम नहीं है, परन्तु पूर्व में एक बार सत्समागम किया था, सत् का श्रवण किया था और वर्तमान सम्यक् विचार के बल से, सातवें नरक की महा तीव्र पीड़ा में पड़ा होने पर भी, पीड़ा का लक्ष्य चूककर सम्यग्दर्शन होता है, आत्मा का सच्चा वेदन होता है। सातवें नरक में पड़े हुए सम्यग्दर्शन प्राप्त जीव को वह नरक की पीड़ा असर नहीं कर सकती, क्योंकि उसे भान है कि मेरे ज्ञानस्वरूप चैतन्य को कोई परपदार्थ असर नहीं कर सकता। ऐसी अनन्ती वेदना में पड़े हुए भी आत्मानुभव को प्राप्त हुए हैं, तब फिर सातवें नरक जितना कष्ट तो यहाँ नहीं है न? मनुष्यपना पाकर रोना क्या रोता रहता है? अब सत्समागम से आत्मा की पहिचान करके आत्मानुभव कर! आत्मानुभव का ऐसा माहात्म्य है कि परीषह आने पर भी न डिगे और दो घड़ी स्वरूप में लीन हो तो पूर्ण केवलज्ञान प्रगट करे! जीवन्मुक्तदशा हो - मोक्षदशा हो। तब फिर मिथ्यात्व का नाश करके सम्यग्दर्शन प्रगट करना तो सुगम है।

—पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी